International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 295-297

दिल्ली सल्तनत के अधीन हिन्दू-मुस्लिम समन्वयवाद की प्रक्रिया : एक आलोचनात्मक अध्ययन

नरेश कुमार
शोधार्थी, इतिहास विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय रोहतक, हरियाणा, भारत।

सारांश
मध्यकालीन भारत मे हिंदू–मुस्लिम दो भिन्न संस्कृतियों के समन्वय की प्रक्रिया सम्पूर्ण मध्यकाल के दौरान एक निरंतर धारा के रूप में बहती रही है। इस प्रक्रिया ने संस्कृति के विभिन्न तत्वों–कला, साहित्य, आचार–विचार, व्यवहार सभी स्तरों पर संस्कृति व समाज को समृद्ध किया। उदारवादी तथा रूढ़िवादी दृष्टिकोणों से प्रभावित होने वाली यह प्रक्रिया सदैव एक समान गति से आगे नहीं बढ़ी। शासकों के वैयक्तिक दृष्टिकोण, धार्मिक वर्ग के प्रभाववश तथा विभिन्न परिस्थितियों के कारण यह प्रक्रिया कभी उन्नत और कभी बाधित होती रही। प्रस्तुत शोध पत्र में दिल्ली सल्तनत के अधीन हिन्दू–मुस्लिम समन्वयवाद की प्रक्रिया का एक आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है।

मूलशब्द– दिल्ली सल्तनत, हिन्दू–मुस्लिम, समन्वयवाद, मध्यकाल, कृति।

परिचय

हिन्दू-मुस्लिम समन्वयवाद की प्रक्रिया की शुरूआत हिंदुस्तान में अरब व्यापारियों के पदार्पण के साथ हुई जो दक्षिण भारत के साथ–साथ उत्तर–पश्चिम में भी अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे थे। भारतीय शासकों [1] तथा मुस्लिम व्यापारियों के पारस्परिक हितों के फलस्वरूप शुरू हुई इस प्रक्रिया ने ही मुस्लमानों को बस्तियां बसाने, स्थानीय निवासियों से वैवाहिक संबंध स्थापित करने, मस्जिदों का निर्माण एवं सामुहिक इबादत करने तथा इस्लाम का प्रसार करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की।[2]

13 वीं शताब्दी में मुस्लिम राज्य की स्थापना से यह प्रक्रिया आगे बढ़ी। इस विषय पर डॉ० ताराचंद कहते हैं कि ''मुसलमान जो भारत आए उन्होंने इसे अपना घर बना लिया। हिंदुओं के इर्द–गिर्द रहते हुए क्योंकि लम्बी कटुता सम्भव नहीं थी, इसलिए पारस्परिक संबंधों ने पारस्परिक समझौते को जन्म दिया। साथ रहने के नवीन प्रयासों ने एक नवीन संस्कृति को जन्म दिया जो न तो शुद्ध हिंदू और न ही मुस्लिम थी। यह वास्तव में 'इंडो–मुस्लिम' संस्कृति थी।''[3]

मुगलों से पूर्व सल्तनत काल में बुद्धिजीवी स्तर पर हिंदू–मुस्लिम समुदायों के बीच वैर–भेदभाव से परे आपसी लेन–देन की आवश्यकता को महसूस किया गया।

इसलिए 14 वीं सदी के आरंभ में अमीर खुसरो [4] ने भाषा, संस्कृति, आचार–विचार आदि ऐसे विषयों को चिह्नित किया जहां हिंदू–मुस्लिम समन्वय की प्रक्रिया को राजनैतिक घटनाओं तथा आपसी संघर्षों से दूर बढ़ावा मिल सकता था। 'तूती–ए–हिंद' के नाम से जाना जाने वाला भारतीय तुर्क समन्वयवाद की प्रवृति का प्रधान प्रतिनिधि कहा जा सकता है। जिसने न केवल हिंदी भाषा के विकास में योगदान दिया अपितु हिंदू–मुस्लिम संगीत के दोनों पक्षों को भी श्री सम्पन्न बना दिया।[5] अपने भारतीय होने पर गर्व करने वाला अमीर खुसरो न केवल हिंदुस्तान को अन्य देशों से सुन्दर मानता है, अपितु हिंदुओं के धार्मिक विश्वास, शिक्षा, भाषा, ज्ञान–विज्ञान की भी प्रशंसा करता है।[6]

इसी प्रकार का उच्च दृष्टिकोण हमें मुहम्मद तुगलक में दिखाई पड़ता है जो 'भारत को मुसलमानों की मातृभूमि बनाने का स्पप्न देखता था।[7]' एक मिले जुले शासक वर्ग की आवश्यकता को महसूस कर मुहम्मद तुगलक ने ही पहले–पहल 14 वीं सदी में हिंदुओं को केंद्रीय अभिजात वर्ग में शामिल करने का व्यवस्थित प्रयास किया।[8] यद्यपि विभिन्न वर्गों तथा समुदायों के सम्मिश्रण की प्रक्रिया खिल्जी क्रांति से ही शुरू हो चुकी थी, पर सही मायनों में हिंदुओं की संख्या एवं प्रभाव में वृद्धि मुहम्मद तुगलक के समय ही देखी गई जैसा कि साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि उसके समय रतन सिंध का गवर्नर, किशन इंद्री का बाजार अधीक्षक, धारा देवगिरी का नायब वजीर इत्यादि प्रमुख हिंदू अफसर थे।[9]

मुहम्मद तुगलक द्वारा हिंदू त्यौहार होली का मनाया जाना, योगियों से वार्तालाप, अकाल के समय नई राजधानी का नाम 'स्वर्ग द्वार' (संस्कृत नाम) रखना, बहन की शादी में मेंहदी तथा दुल्हे की घोड़े पर सवारी संबंधी रस्मों का निभाया जाना, गो मठ का निर्माण करवाया जाना (भतिहागढ़ अभिलेख) इत्यादि प्रमाण उसके उदारवादी दृष्टिकोण के परिचायक तथ्य है।[10] इसी कारण मुहम्मद तुगलक को अखिल भारतीय राज्य की ओर कदम बढ़ाने वाला पहला मुस्लिम शासक माना जा सकता है।

14 वीं सदी में हिंदू व्यापारी जिनकी समृद्धि को समकालीन इतिहासकारों ने उद्धृत किया है, समन्वयवाद की दृष्टि से महत्वपूर्ण जान पड़ते हैं। सुल्तानों के साथ उनके सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों को प्रमाणित करने वाली संस्कृत प्रशस्तियां रही हैं जो बावलियों में इन व्यापारियों द्वारा खुदवाई गई थी।[11] ये प्रशस्तियां एक आरे जहां मुस्लिम शासकों के लिए हिंदुओं द्वारा प्रशस्ति लेखन की प्राचीन हिंदू परम्परा के अनुकरण को दर्शाती है वहीं दूसरी ओर इनसे यह भी ज्ञात होता है कि किस प्रकार एक मुस्लिम शासक की राजधानी में वैदिक मंत्रोच्चारण बिना किसी भय के किया जाता था।[12]

15 वीं 16 वीं सदी के विकेन्द्रीकरण से क्षेत्रीय राज्यों के निर्माण की प्रक्रिया जो कश्मीर, बंगाल, गुजरात, मालवा और सुदूर दक्षिण के हिंदू वातावरण में चल रही थी, वहां स्थानीय हिंदू परम्पराओं तथा मुस्लिम संस्कृति के मिश्रण से कला, साहित्य, भाषा, सामाजिक आचार–व्यवहार में जो परिवर्तन हुए उससे संस्कृति के नवीन रूप उभर कर आए। इस दृष्टि से बंगाल के शासक अलाउद्दीन हुसैनशाह तथा नुसरतशाह का शासनकाल हिंदू–मुस्लिम सद्भाव का काल कहा जा सकता है।[13] अलाउद्दीन हुसैनशाह को सम्मान

देते हुए हिंदुओं ने उसे 'कृष्ण अवतार,' 'नृपति तिलक', 'जगत भूषण' जैसी उपाधियों से सम्बोधित किया।[14] बांग्ला भाषा को सरंक्षण तथा महाभारत का बांग्ला अनुवाद भी इन्हीं शासकों के समय हुआ। जौनपुर के शासक इब्राहीम शाह शर्की का दरबार भी हिंदू विद्वानों व कलाकारों का सरंक्षक रहा।[15]

सुदूर दक्षिण में स्थित विजयनगर साम्राज्य का शासक देवराय द्वितीय हर धर्म, समुदाय व मत के प्रति उदारता रखता था। स्त्रोतों से ज्ञात होता है उसने अपनी सेना में 2000 मुस्लिमों को भर्ती किया, जागीरें दी तथा नगर में मस्जिद बनवाई।

वह अपने सिंहासन के समक्ष कुरान की एक प्रति इसलिए भी रखता था ताकि मुसलमान बिना अपने धार्मिक कानूनों का उल्लंघन किए उसे प्रणाम कर सके।[16] इसी प्रकार के सार्थक प्रयास बहमनी राज्य तथा उसके अवशेषों पर उभरने वाले दक्षिणी राज्यों में हुए। इनके प्रयासों के फलस्वरूप 'उर्दू' उत्तर के प्रवासियों तथा दक्षिण के स्थानीय निवासियों के बीच का सम्पर्क माध्यम बन गई।[17]

इन्हीं सदियों के दौरान कश्मीर के शासक जैनुल आबिद्दीन ने अपने उदारवादी दृष्टिकोण से जातिगत व आस्थाओं के सभी भेदों को भूलाकर न केवल श्रेयभट्ट जैसे योग्य हिंदुओं को नियुक्त किया अपितु मंदिरों के निर्माण व मरम्मत को भी प्रोत्साहन दिया।[18] मुस्लिम प्राचीन भारतीय संस्कृति से परिचित हो सके इस उद्देश्य से प्राचीन हिंदू ग्रन्थों का अनुवाद करवाया गया।

मुस्लिम धर्मग्रंथ व हिंदू पुराण ग्रंथ सुनकर वह बड़ी शांति अनुभव करता था।[19] ऋषि नामक सुफियों की विचारधारा जो हिंदू–मुस्लिम रहस्यवाद का विशिष्ट मिश्रण थी, इसी समय प्रभाव में रही।[20]

उपर्युक्त साक्ष्यों से ऐसा प्रतीत होता है कि मुगल साम्राज्य की स्थापना से पूर्व भी भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों में सामंजस्य व सहयोग की एक प्रक्रिया चल रही थी। जैसा कि के० एम० अशरफ कहते हैं कि ''अकबर से पूर्व का युग भारतीय समाज के निर्माण का दौर था। इसी समय भारतीय संस्कृति की ऐसी निर्माणकारी शक्तियां सक्रिय हुई जिन्हें आधार बनाकर अकबर और उसके उत्तराधिकारी भारतीय सांस्कृतिक विकास को नई दिशा दे सके।''[21]

हिंदू–मुस्लिम समन्वयवाद के जिस दौर का अध्ययन सल्तनत और क्षेत्रीय शासकों के अधीन हमने किया है और जिस दौर का अध्ययन हमें आगे मुगल शासन काल के दौरान करना है वह कोई निरंतर चलने वाली बाधा रहित प्रक्रिया नहीं थी, अपितु यह प्रक्रिया कभी रूढ़िवादी धार्मिक वर्ग के प्रभाववश तो कभी शासकों के व्यक्तिगत दृष्टिकोण से अवरूद्ध होती रही। इसके विषय में मोहम्मद यासीन कहते हैं कि ''तत्कालीन समाज संमजन और मिश्रण की शक्तियों के साथ–साथ पृथकतावादी दृष्टिकोणों से भी प्रभावित रहता था।''[22]

इस प्रकार के साक्ष्य हमें इल्तुतमिश के शासन काल से ही मिलने शुरू हो जाते हैं जब रूढ़िवादी उलेमा द्वारा हिंदुओं के संदर्भ में 'इस्लाम या मृत्यु' का विचार रखा गया।[23] काजी मुगीसुद्दीन के इन्हीं रूढ़िवादी विचारों को अलाउद्दीन ने यह कह कर नकार दिया ''मैं नहीं जानता कि कुरान और धर्मशास्त्र क्या कहते हैं पर राज्य के हित और प्रजा के कल्याण की दृष्टि से जो भी उपयुक्त होगा, मैं वहीं आदेश जारी कर देता हूँ।''[24] बरनी जैसा राजनीतिक विचारक जो भली भांति यह समझता था कि हिंदुस्तान में जहां हिंदू बहुमत में रहते हैं जवाबित के अभाव में शासन नहीं चलाया जा सकता, वह बार–बार इस बात को लेकर विलाप करता है कि कैसे एक मुस्लिम शासक के राज्य में इस्लामी कानूनों की अनदेखी की जाती है।[25]

फिरोज तुगलक और सिंकदर लोधी का शासनकाल रूढ़िवादिता की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। मुहम्मद तुगलक की असफलताओं का लाभ उठाकर उलेमा ने फिरोज को अपनी सलाह मानने के लिए उकसाया।[26]

जजिया का प्रत्यक्ष आरोपण, हिन्दू ब्राह्मण को मुस्लिम का धर्मांतरण करवाने के आरोप में जिंदा जलवाना, दिल्ली के आस–पास के मंदिरों को तुड़वाना इसी अनुदारवादी वर्ग के प्रभाव का परिणाम था।[27]

सिकंदर लोधी ने तो स्वयं ही उलेमा से वैधता प्राप्त करके हिंदुओं के पवित्र तीर्थ स्थल कुरूक्षेत्र के मंदिर व तालाब को अपवित्र करने पर विचार किया था।[28] एक वार्षिकोत्सव जो गाजी मियाँ की संस्कृति से जुड़ा था तथा जिसमें हिंदू व मुस्लिम समान रूप से भाग लेते थे पर सिकंदर लोधी ने प्रतिबंध लगाने का प्रयास किया।[29]

उपरोक्त साक्ष्यों से प्रमाणित होता है कि यद्यपि विभिन्न शासकों के शासनकाल समन्वयवाद की दृष्टि से बाधक सिद्ध हुए फिर भी हिंदुस्तान की परिस्थितियों में हिंदू–मुस्लिम परस्पर सद्भाव के महत्व को हर मध्यकालीन शासक भली–भांति समझता था जैसा कि के० ए० निजामी कहते हैं ''मुस्लिम शासकों ने अपनी आरम्भिक विजयों के पश्चात ही समझ लिया था कि अपने सभी अनुयायियों के साथ सहिष्णुता की नीति अपनाकर चलना हि यहां शासन करने का एकमात्र सम्भव उपाय हो सकता है।''[30]

सन्दर्भ सूची–

1. (इस दृष्टि से कालीकट के जमोरिन तथा गुजरात के बालाहार शासकों का नाम लिया जा सकता है.....विस्तार के लिए दखिए के० एस० लाल, अरली मुस्लिमस इन इंडिया, बुक्स एण्ड बुक्स पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 1984 : पृष्ठ 5)
2. के० एस० लाल, अरली मुस्लिमस इन इंडिया : 5–8
3. ताराचंद, इन्फलुएन्श ऑफ इस्लाम ऑन इंडियन कल्चर, द इंडियन प्रैस प्रा० लि०, इलाहाबाद, 1963 : पृष्ठ 136
4. (अमीर खुसरो अलाउद्दीन खिलजी के शासन काल का महान सूफी संत, इतिहासकर, कवि तथा संगीतज्ञ था, जिसने अनेक साहित्यिक एवं ऐतिहासिक कृतियों की रचना की। उनके द्वारा रचित नुह–सिपेहर, किरानुस्सादैन, आशिका जैसी कृतियां ऐतिहासिक महत्व की है तथा मातृभूमि के प्रति उपके प्रेम को प्रकट करती हैं)
5. युसूफ हुसैन, ग्लिम्पसिज ऑफ मिडिवल इंडियन कल्चर, एशिया पब्लिशिंग हाऊस, पुनर्मुद्रण बम्बई, 1973 : पृष्ठ 103–106
6. वही : 104–106
7. मुहम्मद यासीन, इस्लामी भारत का सामाजिक इतिहास, अटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 1988 : पृष्ठ 95–96
8. सतीश चंद्र, 'सांस्कृतिक एकीकरण और भारतीय इतिहास', मध्यकालीन भारत में इतिहास लेखन, धर्म और राज्य का स्वरूप, ग्रंथ शिल्पी प्रा0 लि0, नई दिल्ली, 1999 : पृष्ठ 24–25
9. मुहम्मद अतहर अली, द मुगल इंडिया–स्टडीज इन पॉलिटी, आईडियाज, सोसायटी एण्ड कल्चर, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, नई दिल्ली, 2010 : पृष्ठ 19–20
10. एम० रशीद, सोसायटी एण्ड कल्चर इन मिडिवल इंडिया, फर्मा के० एल० मुखोपाध्याय, कलकता, 1969 : पृष्ठ 227–33
11. (इनमें पालम व सरबन बावली का नाम लिया जा सकता है ....)
12. मुहम्मद अतहर अली, द मुगल इंडिया : स्टडीज इन पॉलिटी,

आईडियाज, सोसायटी एण्ड कल्चर ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, नई दिल्ली, 2010 : पृष्ठ 20–22
13. परमानन्दलाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारत में हिंदू–मुस्लिम सद्भाव : प्रयास एवं प्रभाव, रिसर्च पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1997 : 90
14. वही : पृष्ठ 90–91
15. वही : पृष्ठ 91–92
16. वही : पृष्ठ 92
17. युसूफ हुसैन, ग्लिम्पसिज ऑफ मिडिवल इंडियन कल्चर, पुनर्मुद्रण, बम्बई–1973 : पृष्ठ 92–94
18. परमानन्दलाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारत में हिंदू–मुस्लिम सद्भाव : प्रयास एवं प्रभाव, रिसर्च पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1997 : पृष्ठ 96–97
19. मो० हबीब तथा के०, ए० निजामी, दिल्ली सल्तनत, भाग–2, स्वतंत्र क्षेत्रीय राज्य, भारतीय इतिहास अनुसंधान प्ररिषद, प्रथम हिंदी संस्करण, नई दिल्ली, 1978 : पृष्ठ 35–36
20. परमानन्दलाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारत में हिंदू–मुस्लिम सद्भाव : पृष्ठ 96–97
21. के० एम० अशरफ, हिंदुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, 1999 : पृष्ठ 4, 284
22. मुहम्मद यासीन, इस्लामी भारत का सामाजिक इतिहास, अटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 1988 : पृष्ठ 96
23. एन० के० पी० सिन्हा, इस्लाम इन इंडिया : सिंथिसिस ऑफ कल्चरस, खुदाबख्श ओरियन्टल पब्लिक लायब्रेरी, पटना, 1996 : पृष्ठ 30
24. वही : पृष्ठ 33
25. आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी लि०, आगरा, 1964 : पृष्ठ 42
26. के०एम० अशरफ, हिंदुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ : पृष्ठ 101–102
27. के०एम० अशरफ, हिंदुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ : 102
28. वही : पृष्ठ 104
29. बंगाल में कसाईयों के संरक्षक संत जिन्हें मुसलमान गाजी मियाँ और हिन्दू सत्यवीर के नाम से पूजते हैं संदर्भ के लिए देखें एम० रशीद, मध्यकालीन भारत में समाज व संस्कृति, फर्मा के०एल० मुखोपाध्याय कलकत्ता, 1969 : पृष्ठ 234
30. के० ए० निजामी, पॉलिटिक्स एण्ड सोसायटी ड्युरिंग अरली मिडिवल पीरियड, पीपल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1974 : पृष्ठ 17